तुम भी
मेरे साथ चलो

डॉ॰ रमेश पोखरियाल 'निशंक'

जन्म : 15 अगस्त सन् 1959, ग्राम पिनानी, पट्टी घुड़दौड़स्यूँ जनपद पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखंड (हिमालय)भारत।

प्रकाशित कृतियाँ : समर्पण, नवांकुर, मुझे विधाता बनना है, तुम भी मेरे साथ चलो, देश हम जलने न देंगे, मातृभूमि के लिए, जीवन-पथ में, कोई मुश्किल नहीं, प्रतीक्षा, ए वतन तेरे लिए, संघर्ष जारी है (काव्य-संकलन): रोशनी की एक किरण, बस एक ही इच्छा, क्या नहीं हो सकता, भीड़ साक्षी है, खड़े हुए प्रश्न, विपदा जीवित है, एक और कहानी, मेरे संकल्प (कथा-संग्रह): मेरी व्यथा, मेरी कथा (शहीदों के पत्रों का संकलन): निशांत, मेजर निराला, बीरा, पहाड़ से ऊँचा (उपन्यास), हिमालय का महाकुंभ-नंदा राजजात (यात्रा-वृतांत)।

देश-विदेश की अन्य भाषाओं में अनुवाद : 'ए वतन तेरे लिए' व 'खड़े हुए प्रश्न' का तमिल व तेलुगु भाषा में अनुवाद। 'खड़े हुए प्रश्न' व 'क्या नहीं हो सकता' का मराठी में अनुवाद। हैम्बर्ग विश्वविद्यालय द्वारा 'बस एक ही इच्छा', 'प्रतीक्षा' व 'तुम और मैं' कृतियों का जर्मनी में अनुवाद। 'भीड़ साक्षी है' कृति का अँग्रेज़ी भाषा में अनुवाद हैम्बर्ग विश्वविद्यालय में प्रो॰ तात्यानिया द्वारा कई कहानियों का रूसी भाषा में अनुवाद।

साहित्य पर शोधकार्य : गढ़वाल, कुमाऊँ, मेरठ, मद्रास, रुहेलखंड व कुरुक्षेत्र सहित अनेक विश्वविद्यालयों में साहित्य पर शोधकार्य।

राजनीतिक पृष्ठभूमि : 1993 व 1996 में लगातार तीन बार कर्णप्रयाग क्षेत्र से उत्तर प्रदेश विधानसभा हेतु निर्वाचित; सन् 1997 में उ॰प्र॰ में पर्वतीय विकास विभाग व तदुपरांत संस्कृति, पूत धर्मस्व व कला विभाग के कैबिनेट मंत्री। उत्तरांचल राज्य गठन के उपरांत वित्त सहित बारह विभागों के कैबिनेट मंत्री। मार्च 2007 से मई 2009 तक स्वास्थ्य सहित अनेक विभागों के कैबिनेट मंत्री। वर्तमान में उत्तराखंड के मुख्यमंत्री।

सम्मान : उत्कृष्ट साहित्य-सृजन हेतु तत्कालीन राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह, डॉ॰ शंकरदयाल शर्मा व डॉ॰ ए॰पी॰जे॰ अब्दुल कलाम द्वारा राष्ट्रपति भवन में सम्मानित, अंतर्राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, कोलंबो, श्रीलंका द्वारा साहित्य व समाजसेवा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य हेतु 'डॉक्टर ऑफ़ साइंन्स' की मानद उपाधि, हैम्बर्ग विश्वविद्यालय जर्मनी के अतिरिक्त हालैण्ड, नार्वे, रूस सहित कई यूरोपीय देशों व विश्वविद्यालयों सहित देश-विदेश की अनेक सामाजिक/सांस्कृतिक/साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

संप्रति : प्रधान संपादक 'सीमांत वार्ता' दैनिक व उत्तराखंड सरकार में मुख्यमंत्री।

संपर्क : 37/1 विजय कॉलोनी, रवींद्रनाथ टैगोर मार्ग, देहरादून, उत्तराखंड, भारत।
e-mail : nishankramesh@gmail.com
website : rameshpokhriyalnishank.com

तुम भी मेरे साथ चलो

(राष्ट्रीय अस्मिता की कविताएँ)

रमेश पोखरियाल 'निशंक'

हिंदी साहित्य निकेतन, बिजनौर (उ॰प्र॰)

ISBN 97881-89790-69-1

प्रकाशक : **हिन्दी साहित्य निकेतन**
16 साहित्य विहार
बिजनौर (उ०प्र०)
फ़ोन : 01342-263232
ई-मेल : giriraj3100@gmail.com
वैब साइट : www.hindisahityaniketan.com
टाइप सैटिंग : अनुभूति ग्राफ़िक्स, बिजनौर (उ०प्र०)
मुद्रक : आदर्श प्रिंटर्स, दिल्ली 32
संस्करण : 2009
मूल्य : एक सौ पचास रुपए

TUM BHEE MERE SAATH CHALO (POETRY) BY RAMESH POKHARIYAL 'NISHANK'
RS. 150.00

समर्पित

उस अकलुषित प्राणी को
जो परहित के लिए
अर्पित है.....

भूमिका

श्री 'निशंक' ने नई पीढ़ी के उदीयमान कवि के रूप में अपनी जो छवि बनाई है, उससे बड़ा संतोष मिलता है। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं कि उनकी कविता एक अमिट प्रभाव पैदा करने की क्षमता रखती है। एक युवा व्यक्ति को जीवन में प्रवेश करते हुए जीवन का जो पहला-पहला अहसास होता है, वह 'निशंक' की कविताओं में पूरी संभावनाओं के साथ उभरा है। आज के जगत् की कुटिलता की विषम छाया उनकी कई कविताओं में व्यक्त हुई है। 'कैसा काल आया' बदलते हुए मानव और उसके समाप्तप्राय: जीवनमूल्यों के सामने एक कटु प्रश्न प्रस्तुत करती है। कवि का जीवन-बोध उसे जगत् की सही प्रतीति कराने में सहायक होता है और फिर शुरू होती है वास्तविक मानव की तलाश–

ये मानव, ये जंगल,
ये पर्वत, ये हवाएँ,
सब किराए के हैं।
जिन पर कर लगता है।
अफ़सोस!
आज के तंत्र से,
मुझे डर लगता है।

आत्मीयता के अभाव में वह अपने पास एक ऐसी दुनिया को पाता है, जो उसकी अपनी नहीं है। अपना-परायापन की स्थिति उसे निरंतर कचोटती है।

इस स्थिति ने कवि को अकेलेपन की पीड़ा प्रदान की है। संग्रह की कई कविताओं में पथ की विकटता, चारों तरफ़ लगी आग, अन्याय, संबंधहीनता

आदि की भावना तीव्रता के साथ प्रकट हुई है, जो प्राणी के मन को स्पंदित करती है–

कौन जुल्म ऐसा कि,
मुझ पर ढाया न गया।
कौन दर्द ऐसा जो
मुझ तक आया न गया।

दु:ख की धारा का अहसास बार-बार इन कविताओं में बोलता है कि दु:ख क्या है? कैसे और कहाँ से आया है? यह जिज्ञासा भी इन कविताओं में व्यक्त हुई है। किंतु एक अच्छी बात यह है कि इन कविताओं में दु:ख का पूजन नहीं है। दु:ख के कारणों को तोड़ने का आग्रह मुख्य है और साथ ही है अपने दु:ख को दूसरे के दु:ख में मिलाने की भावना–

तुम न मिलते, प्रिय न मिलता,
जीवन का यह पुष्प न खिलता।
आज खुशी का दिन है मेरा,
मैंने दर्द अपनाया तेरा।
मिला हूँ तुमको सुख-दुख कहने,
मुझको अब पीड़ा सहने दो।
छोड़ो क़ैद पड़ी पीड़ा को,
इसको मेरे सँग बहने दो।

इस प्रकार पीड़ा से जूझने और बाँटने का भाव इस कवि को रोमानी बनाने से बचाता है।

इसी पीड़ा के बीच से संभवत: कवि के मन में दृढ़ संकल्प जागता है। वह व्यक्ति और समाज में अग्रसर एक जुझारू तेवर लेकर लड़ने को सन्नद्ध दिखाई देने लगता है। इसीलिए कई कविताओं में–

आज इस निष्प्राण तन में,
प्राण बन मुझको समाना।
जो अँधेरे में भटकते,
रोशनी उनको दिखाना।

–का अहसास उभरता है। इसी के साथ ख़ुद सँभलना पड़ेगा का भाव दूसरों की अपेक्षा अपने सबल की ओर बढ़ाता है। यहीं कवि गूँगे इतिहास, बाँझ व्यवस्था

के विरुद्ध उठ खड़ा होता है।

कुल मिलाकर इस संग्रह की कविताएँ कई रंगों की हैं। यहाँ कवि स्वप्नों और संघर्षों से रंगा है, इसलिए ये कविताएँ इंद्रधनुष के समान सुंदर हैं। 'निशंक' की कविता भाव ही नहीं, भाषा के स्तर पर भी सजीव है। उसमें झूठा वाग्जाल नहीं है।

अपनी बात निश्छल भाव से कहने का आग्रह इन कविताओं से अंतरंग निकटता प्रदान करता है।

डॉ॰ गोविंद चातक

अपनी बात

यह जीवन जिसे मैंने हर क्षण, हर क़दम, हर मोड़ और हर श्वास-प्रश्वास में न केवल महसूस किया है, अपितु जिया है। गरल-सम इन कटु अनुभवों को अमृत-सम पिया है।

जीवन-मृत्यु से जूझते हुए इस विकल पथिक ने गूँगे इतिहास, बाँझ व्यवस्था से विद्रोह ही नहीं किया, बल्कि निराशा के घोर तम में आशा के सुप्रभात को देखा है। इसने न केवल सच्चे मानव की खोज की, अपितु सारे संसार की पीड़ा को स्वयं में समाते हुए, दुनिया के सारे खोखले बंधनों को तोड़कर सुख-दु:ख के घात-प्रतिघातों को भी झेला है, पर रहा 'निशंक' अकेला है।

प्रिय पाठकवृंद, यह सत्य है कि मेरी अपनी असह्य पीड़ा की आह से उपजे गान ने ओठों पर मधु मुस्कान देकर निष्प्राण तन में प्राण बनने का संकल्प लिया, तभी तो लघु जीवन के लंबे पथ में 'तुम भी मेरे साथ चलो' कहना मेरे लिए सार्थक हुआ।

आभार अभिव्यक्ति-

सर्वप्रथम परम आदरणीय प्रोफ़ेसर गोविंद चातक जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने इस संकलन की भूमिका लिखकर मुझे उपकृत किया।

प्रेरणादायी मार्गदर्शन के लिए श्रद्धेय डॉ॰ नारायणदत्त पालीवाल, मर्मज्ञ विद्वान् श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी व आदरणीय भाई डॉ॰ नंदकिशोर ढौंड़ियाल 'अरुण' का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

मेरे प्रेरणा-स्रोत डॉ॰ श्यामधर तिवारी, सुनीलकुमार सक्सेना जी के समय-समय पर उपयुक्त मार्गदर्शन के लिए चिर कृतज्ञ रहूँगा।

पितृतुल्य पूज्यपाद कृष्णकुमार शर्मा, जिनका स्नेहयुक्त आशीर्वाद

मिलता रहा है, उनका आभार व्यक्त करना मात्र औपचारिकता ही समझता हूँ।

आत्मीयता, पूर्ण स्नेह व मानसिक सहयोग हेतु आदरणीय डॉ॰ शिवप्रसाद डबराल 'चारण', वयोवृद्ध पत्रकार श्री भैरवदत्त धूलिया, ब्रिगेडियर लक्ष्मणसिंह जी, श्रीयुत् जगदीश ढौंड़ियाल, गढ़वाल विश्वविद्यालय के कुलपति श्री एच॰एच॰ए॰ बौड़ाई, पूज्य अग्रज श्री राजेंद्र पोखरियाल, श्री विनोद नौटियाल, भाईजी श्री शशिकांत एवं अपने अनेक पाठकों को सतत् स्मरण करना शुभ समझता हूँ।

प्रस्तुत संग्रह के प्रकाशन में साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के सदस्य श्रद्धेय डॉ॰ योगेंद्रनाथ शर्मा 'अरुण' एवं मेरे मित्र तथा हिंदी सहित्य निकेतन, बिजनौर के सचिव डॉ॰ गिरिराशरण अग्रवाल का जो सहयोग प्राप्त हुआ है उसके लिए मैं उनका विशेष रूप से आभारी हूँ।

अंत में आत्मीय मदनमोहन एवं प्रिय कुसुमकांता को मैं भुलाए नहीं भूल सकता, जिनके भावनात्मक, मानसिक सहयोग से 'तुम भी मेरे साथ चलो' पुस्तिका आपके हाथों में पहुँच पायी है। आप सबका अभिनंदन करते हुए मैं अपनी बात आपको अर्पित करता हूँ।

रमेश पोखरियाल 'निशंक'

अनुक्रमणिका

भाग : एक

अकेला मुसाफ़िर	16
सबको बचाकर अकेला चला	18
क़िस्मत की करनी	20
रोना आया	21
दुनिया को आना है	23
कहीं दूर जाना चाहिए	24
ज़िंदगी मौत से लड़ता रहा	25
कैसा काल आया	26
पीड़ामुक्त करो	27
लंबे पथ में	28
निष्प्राण तन में	29
शांत बहने दो	30
आह, बंधन तोड़ डाल	31
क्या मिलना शेष रहा	32
मानव कहाँ है	33
अच्छा लगता है	35
सँभलना पड़ेगा	36
भूखा नहीं था	37
लाश पड़ी थी	38
हँसी डस रही है	39
कितनी ही क्रांति पुकारी	40

भाग : दो

उन्मुक्त रहने दो	44
गूँगा इतिहास बाँझ व्यवस्था	45
माया में अंधा पंछी	46
कोठी पर आग होगी	47
संदेश लाई थी	50
तेरी विजय होगी	51
तेरे लिए मैंने निज को मिटाया	52
बेचैन रहा	54
तुम्हारा नाम होगा	55
वर्षों की तेरी साधना	57
यातना अकेली थी	58
गिरते-उठते रोते-हँसते	59
टूटना नहीं	61
सोचने को दे गया	63
इतना नेह न देना	65
प्यारा जीवन	66
बाधा को तोड़े बढ़ा जा रहा हूँ	67
हिम के शिखर से बहता	69
जीवन मेरा तू ही सारा	70
मीत तेरे गीत गाता	72
संकल्प ले रहा हूँ	73
आह से उपजा गान	75
फिर भी मधु मुस्कान	76
कोई मूल्य न होगा	78
ऐसा नहीं होने दूँगा	79

♦♦

भाग : एक

अकेला मुसाफ़िर

मैं मुसाफ़िर हूँ अकेला,
एक पथ पर चल रहा हूँ।

सुबह उठकर जिधर जाऊँ,
कष्ट-दुख क्या-क्या न पाऊँ।
पक्षियों की भाँति डेरा,
कुछ ठिकाना है न मेरा।
आज तेरे द्वार हूँ,
उस द्वार पर भी कल रहा था।
मैं मुसाफ़िर हूँ अकेला।

पथ विकट, पर लक्ष्य तय है,
पड़ाव आने पर भी भय है।
जाने कहाँ, कब, कौन होगा,
जो भरा विष, मौन होगा।
अब सुधा का पान करना,
सोच मैं हर पल रहा हूँ।
मैं मुसाफ़िर हूँ अकेला।

कौन अपना औ' पराया,
किसने, किसको, कब मिटाया।
इस उम्र तक कटते व जुड़ते,
देखे बहुत मिलते-बिछुड़ते।
आज अंदर और बाहर,
हर ओर से मैं जल रहा हूँ।
मैं मुसाफ़िर हूँ अकेला।

♦♦

सबको बचाकर अकेला जला

बताया तो मैंने बहुत कुछ था तुमको,
जगा हूँ स्वयं मैं, मुझे न जगाना।
फिर भी जलाई है यह लौ हृदय में,
तो तुमको भी है इसका दर्द पाना।

सागर के तल से भी गहरा जहाँ था,
छिपाया था मैंने क्यों तुमने निकाला।
यदि जल उठेगा तो यह राख होगा,
यही सोच मैंने सतत तुमको टाला।

आवाज़ देकर पुकारा क्यों उसको,
जो गहरा छिपा था मेरा दर्द गाना।
बताया तो मैंने, बहुत कुछ था तुमको,
जगा हूँ स्वयं मैं, मुझे न जगाना।

बताओ क्यों आए थे इस अग्निपथ में,
मैं सबको बचाकर अकेला जला था।
सूना था हर पल वही मार्ग मेरा,
जिस पर मैं केवल अकेला चला था।

विकल इस पथिक को आवाज़ दी क्यों,
तुम्हें अब तो इस पथ बहुत कष्ट पाना।
बताया तो मैंने बहुत कुछ था तुमको,
जगा हूँ स्वयं मैं, मुझे न जगाना।

♦♦

क़िस्मत की करनी

सुबह हुई, उठकर आया,
गाना सड़कों पर गाया।

यह क़िस्मत की अपनी करनी,
जो मुझको जीवन में भरनी।
हाय, अँधेरा जीवन मेरा,
अंधे! यहाँ कौन है तेरा?

कभी किनारे, कभी मध्य तो,
दीवारों से तू टकराए।
दिल पर चोट न जाने कितनी,
तन पर तो निशि-दिन ही खाए।

आलोकित है दुनिया तेरी,
ईश! मुझे घनघोर अँधेरी।
कोई अंधा दर-दर भटके,
यह कैसी माया है तेरी?

♦♦

रोना आया

खुद के इस मुकद्दर पर,
उसको रोना आया था।
तभी तो आँख भर-भर कर
उसने गीत गाया था।

यहाँ कोई नहीं अपना,
नहीं कोई बसेरा है।
जिसे भी आज तक देखा,
लगा कोई न मेरा है।

जिसे वह ढूँढ़ने निकला,
कहीं उसको न पाया था।
तभी तो आँख भर-भरकर,
उसने गीत गाया था।

रहा है पेट ख़ाली ही,
वह दर-दर पानी को भटका।
स्वयं के हाथ ही उसने,
स्वयं की लाश को पटका।

पड़ी इस लाश को फिर भी,
तड़पते उसने पाया था।
तभी तो आँख भर-भर कर,
उसने गीत गया था।

♦♦

दुनिया को आना है

नवजात की यह बात,
निराशा भरी क्यों रात।

यह रात जाएगी,
सुप्रभात लाएगी।
गहन अँधेरी रात है,
फिर भी आशा की बात है।

यह अंकुर है अभी,
कल हरा पौधा होगा।
पत्ती होंगी, फूल खिलेंगे,
फल भरा पौधा होगा।

एक दिन वृक्ष बन,
छाया सभी को दे सकेगा।
फूल-फल अनगिन रहेंगे,
भटका पथिक भी ले सकेगा।

तोड़ो नहीं, पोषो इसे तुम,
फल है तुमको भी पाना।
छाँव आज न आए कोई,
कल दुनिया को है आना।

♦♦

कहीं दूर जाना चाहिए

मन करता है,
कि यहाँ से
कहीं दू ऽ ऽ ऽ र
बहुत दूर चले जाना चाहिए।
किंतु
शर्त यह है कि
वहाँ
स्वार्थों में जकड़ा,
माया को पकड़ा,
हिंसा का पूजक,
दानव सूचक
आदमी कहलाने वाला
आज का
यह आदमी नहीं आना चाहिए।

♦♦

ज़िंदगी मौत से लड़ता रहा

ज़िंदगी मौत से रोज़ लड़ता रहा,
घिर अन्याय से नित झगड़ता रहा।

सब विरोधों से संघर्ष करता रहा,
ज़ख़्मों को निज के मैं भरता रहा।
गिरते स्वयं को पकड़ता रहा,
ज़िंदगी मौत से रोज़ लड़ता रहा।

जो दरारें पड़ीं उनको सीता रहा,
कटु घूँट पीकर भी जीता रहा।
हर क़दम दर्द सहकर भी बढ़ता रहा,
ज़िंदगी मौत से रोज़ लड़ता रहा।

सिसकती साँस को धैर्य देता रहा,
छलकते हुए अश्रु पीता रहा।
कंटकाकीर्ण राहों में बढ़ता रहा,
ज़िंदगी मौत से रोज़ लड़ता रहा।

♦♦

कैसा काल आया

मैं हूँ ऐसा, मैं हूँ वैसा,
क्षण-क्षण कहते जाना है।
अब तो सबका एक रवैया,
हाँ में हाँ मिलाना है।

बल से छीनेंगे या ठगकर,
ज़बरन लूटेंगे ठानी है।
दुनिया भूखी-नंगी हो पर,
खुद तो मौज उड़ानी है।

कैसा अद्‌भुत काल ये आया,
मानव हुआ दानवों जैसा?
आगे-पीछे और नहीं कुछ
केवल इसके पैसा पैसा।

♦♦

पीड़ामुक्त करो

क्यों दुख है, कहाँ से आया?
कौन है जो इसको लाया?

अभिन्न अंग है यह मेरा,
पता नहीं था क्या उसको?
तड़प रहा था क्षण-क्षण तबसे,
गया है जबसे यह प्रिय मेरा।

तुम न मिलते प्रिय न मिलता,
जीवन का यह पुष्प न खिलता।
आज खुशी का दिन है मेरा,
मैंने दर्द अपनाया तेरा।

मिला हूँ तुमको सुख-दुख कहने,
मुझको अब पीड़ा सहने दो।
छोड़ो क़ैद पड़ी पीड़ा को,
इसको मेरे सँग बहने दो।
इसको मुझसे कुछ कहने दो,
इसको मेरे सँग रहने दो।

♦♦

लंबे पथ में

आते-जाते लोग अनेकों,
कुछ दिल में बस जाते हैं।
लाख भुलाने पर भी ये तो,
याद हमेशा आते हैं।

लघु जीवन के लंबे पथ में,
कुछ तो पथिक मिल जाते हैं।
जिनको हम पथ से मंज़िल तक,
साथ-साथ ही पाते हैं।

♦♦

निष्प्राण तन में

चाँदनी मुझको मिली,
अब ग़म नहीं मुझको ज़रा भी।
देख अब मैं बढ़ चला,
जीवित करूँगा जो मरा भी।

आज तक निष्प्राण होकर,
जो पड़े मझधार लटके।
बिना जीवन जी रहे जो,
मिटे वे संसार भटके।

आज इस निष्प्राण तन में,
प्राण बन मुझको समाना।
जो अँधेरे में भटकते,
रोशनी उनको दिखाना।

रोशनी देकर मैं इक दिन,
सूर्य बनकर रह सकूँगा।
किंतु दुख है रात में,
ज्योतित उन्हें कैसे करूँगा?

चिंता नहीं, संग चाँदनी है,
ये कार्य भी अब कर सकूँगा
पीछा किया है जिस निशा ने,
नव ज्योति उसमें भर सकूँगा।

♦♦

शांत बहने दो

नयनों में अश्रु रहे इनके,
सब-कुछ रहा इनमें समाया।

बेचैनी बढ़ती रही,
साँसें चढ़ती रहीं।
नयनों में अश्रु सतत छलके,
उभरी हैं रोते-रोते,
मेरी नयनों की पलकें।

जलती रही आज तक,
गाल गीला कर गई है।
आसमाँ से आ नयन में,
वह बूँद सागर भर गई है।

गोद कहते हैं जिसे,
सागर उसी में बह रहा है।
शांत बहने दो मुझे, वह
बिन कहे भी कह रहा है।

♦♦

आह, बंधन तोड़ डाले

तुमने कहा बंधन है सारा,
बिना अपराध है ये कारा।
चलना कठिन होगा तुम्हारा,
मान लो कहना हमारा।

पाँव में बेड़ी सजेगी,
हाथ में हथकड़ी होगी।
उन्मुक्तता भी आज तेरी,
छटपटाती क़ैद होगी।

बढ़ चला था तीव्रता से,
बंधनों से पड़े पाले।
आह, मैंने सभी बंधन,
एक क्षण में तोड़ डाले।

मुड़ते हुए सीधे किए,
टूटे हुए सब जोड़ डाले।
आह, मैंने सभी बंधन,
एक क्षण में तोड़ डाले।

♦♦

क्या मिलना शेष रहा

कौन जुल्म ऐसा कि,
मुझ पर ढाया न गया।
कौन दर्द ऐसा जो,
मुझ तक आया न गया?

कौनसी पीड़ा शेष रही,
जिसका मिलन नहीं मुझसे।
क्या मिलना अब शेष रहा,
मैं क्या कहूँ तुझसे?

♦♦

मानव कहाँ है

न जाने क्यों?
न जाने क्यों कभी ऐसा लगता है,
ये मानव
ये जंगल
ये पर्वत
ये हवाएँ
सब किराए के हैं,
जिन पर कर लगता है।
मानव अब मानव कहाँ?
यह तो
भौतिक यंत्र बन गया है।
अफ़सोस!
आज के तंत्र से,
मुझे डर लगता है।
अपने ही घर में,
अपनी रक्षा के लिए
आदमी जगता है।
ये खड़ी चट्टानें खाने को दौड़ती हैं,
साँसें विषैली हवा छोड़ती हैं।

किसी भी जगह
एक क़दम,
बस एक क़दम रखने के लिए भी,
मुझे डर लगता है,
ज़िंदगी का सफ़र आज तो
क्षण-भर का लगता है।
चाहता हूँ विचरण करूँ
उन्मुक्त रहूँ,
पर कहाँ?
यह अब
सपना-भर लगता है।
बात-बात में,
अब तो,
अपनी ही ज़मीन पर भी,
मुझे डर लगता है।

♦♦

अच्छा लगता है

कभी-कभी अच्छा लगता है,
चुप-चुप करके रहना।
और कभी अच्छा लगता है,
आँसू का छिपकर बहना।

सबसे अच्छा यदि लगता है,
चुप रहकर पीड़ा पीना।
ख़ुशी-ख़ुशी, स्वीकार किया है
ऐसा ही जीवन जीना।

♦♦

सँभलना पड़ेगा

कौन है जिससे कहूँ मैं,
वेदना अपने हृदय की।
बात जो मन में उठी है,
क्यों छिपाऊँ मैं प्रलय की?

कौन होगा पास आकर,
जो सतत प्रेरित करेगा।
कौन है दृढ़ भावना से,
रोक जो अनहित करेगा?

कौन होगा देखना जो,
नित्य नव संगीत देगा।
कौन होगा व्यथित मन को,
आज निश्छल प्रीति देगा?

कौन निश्छल प्रीति देगा,
कौन प्रेरित ही करेगा?
ज़िंदगी का सफ़र तुझको
स्वयं तय करना पड़ेगा।

♦♦

भूखा नहीं था

नंगा नहीं था ग़रीबी को ओढ़ा,
दर्द खाया था मैंने, भूखा नहीं था।
बैठा कहाँ था, भटकता रहा मैं,
बदन गीला था मेरा, सूखा नहीं था।

तुम मुझे भूखा न कहना, समझना न नंगा,
जाड़ा है भरपेट, ग़रीबी को पहना।
ज़िंदगी का ये मेला, शुरू अब हुआ है,
जिसमें अभी तो, बहुत कुछ है सहना।

♦♦

लाश पड़ी थी

सफ़ेद कफ़न से ढकी हुई,
देखी है मैंने,
वह लाश पड़ी है।
आँखों में आँसू लिए,
पास सटी,
एक महिला खड़ी है।
शेष सब मौन, बस मौन हैं,
न जाने कौन! वे कौन हैं?
दुख की छाया मुखमंडल पर,
वह साथ नहीं, जो साथ रहा है
जीवन-भर।
काल ने क्रूर दृष्टि क्यों डाली है?
क्या उसका कोई घर ख़ाली है?
यह भी सुख कैसा सुख है जो,
कुछ दिन गिनकर जीवन में,
खुशी बनकर आए,
और सभी को तड़पा-तड़पा,
दुख बनकर जाए।

♦♦

हँसी डस रही है

दर्द था केवल अभी तक,
दर्द भी अब जल रहा है।
मूकता खलती रही पर,
शब्द भी अब खल रहा है।

कभी था उन्मुक्त हँसना,
औ' कभी उन्मुक्त रहना।
आज कैसा समय आया,
अब हँसी भी डस रही है।

♦♦

कितनी ही क्रांति पुकारी हैं

क्या कहूँ मैं तुमसे कि,
मैंने
कितने सदमे खाए हैं?
प्रहार किए किस-किसने
जुल्म कितने ढाए हैं?

दुख के भीषण वन में,
मैंने
कितनी क्रांति पुकारी हैं।
निज की चिता सजाकर,
मैंने
कितनी मौतें टारी हैं।

यह मत पूछो तबसे अब तक
कितने काँटे पाए हैं?
दुख के भीषण वन में,
मैंने
कितने गाने गाए हैं?

क्रांति पुकारी,
मौतें टारीं,
फिर भी जीता जाता हूँ।
जीवन-पथ में,
क़दम-क़दम पर,
चोट हृदय पर पाता हूँ।

♦♦

भाग : दो

उन्मुक्त रहने दो

उन्मुक्त रहने दो मुझे,
बंधन न डालो पाँव में।
स्वयं को ही स्वयं की,
रहने दो कुछ दिन छाँव में।

♦♦

गूँगा इतिहास बाँझ व्यवस्था

कैसा जीवन संघर्षों का,
कैसी क़िस्मत लाए हैं।
अत्याचार युगों से सहते,
सहते ही तो आए हैं।

दर-दर भटके हैं सड़कों पर,
राहों में, चौराहों में।
घर आए हैं लिए निराशा,
बाहों में, इन आहों में।

चली थीं पहले लंबी साँसें,
अब ख़ामोशी साँसों की।
जीवित ही निर्जीव बने हम,
गिनती कर-कर लाशों की।

अभिलाषा को लिए हृदय में,
अब विद्रोह उठा मन में।
बाँझ व्यवस्था औ' गूँगा
इतिहास बदलना है जन में।

♦♦

माया में अंधा पंछी

दिनभर पंछी दौड़-भागकर,
कहता निज से मैं हूँ कौन?
व्यर्थ लालसा क्षणिक है तृष्णा,
देख लिया सब अब हूँ मौन।

दूर कहीं पर कोई शिकारी,
जाल व दाना लाता है।
जाल फेंक कुछ क्षण में वह,
हँस-हँसकर वापस जाता है।

देख रहा है सब-कुछ पंछी,
फिर भी जाल में घुसता है।
माया के पथ में अंधा हो,
दाना पिंजरे में चुगता है।

♦♦

कोठी पर आग होगी

घर को लूटा लुटेरों ने,
देकर आवाज़ ज़ोर से।
सोये जाग गए थे सारे,
इस भयंकर शोर से।

बच्चे थे नादान चिल्लाए,
हम तो जी नहीं पाएँगे।
बचाओ-बचाओ आज हमें,
हाय! हाय! मिट जाएँगे।

यह करुण क्रंदन सुनकर भी,
कोई पास न आया था।
नई बात नहीं है कोई,
कहते सबको पाया था।

और परिणाम हुआ
कि
वे असहाय!

वे असहाय लुट मर गए,
फिर हाय-हाय करने तुम
आए।
क्या हुआ
कैसे हुआ? कब हुआ?
जो कुछ हुआ,
सब बुरा हुआ
संवेदना के आँसू लाए।

पास खड़े किसी
व्यक्ति ने पूछा–
क्यों भई तुम तो
पास ही रहते हो
सब-कुछ आँखों से देखा
फिर भी ऐसा कहते हो?
तो
दलील थी तुम्हारी,
ऐसे समय में,
हम क्या करते?
क्या तुम चाहते थे,
परहित के लिए,
हम भी शहीद होते?
उन तड़पते बच्चों की तरह,
हमारे भी बच्चे रोते?

ओह!
कितना भोलापन है तुम्हारा,
तुमको कुछ भी ज्ञान नहीं है।
पास झोपड़ी जल जाएगी,
कोठी की भी शान नहीं है।

सुनो!
यदि यह जलती आग तुमने,
मिलकर नहीं बुझाई है।
तो यह
झोपड़ी से कोठी पर होगी।
मैंने
यह बात तुम्हें सुझाई है।

♦♦

संदेश लाई थी

घटा पर्वत पर छाई थी,
तू खुशी-खुशी उड़कर आई थी।

बैठ गई थी मुझको घेरे,
आती गई निकट तू मेरे।
या तो मेरे सँग रहना था,
या तो मुझसे कुछ कहना था।

किंतु–
आया चिल्लाते अज्ञानी,
उसने कुछ भी बात न जानी।
उड़ने लगी तू नभ की रानी,
समझाने पर एक न मानी।

अब बैठा हूँ मात्र अकेले,
सभी गए दुनिया के मेले।
सोच रहा हूँ तू क्यों आई,
क्या संदेशा मुझको लाई?

♦♦

तेरी विजय होगी

अँधेरी धरा तूफ़ान आए,
भूख आ-आ क्यों न खाए।
वर्षा सहित हिमपात आए,
पीड़ा या ज्वर क्यों न पाए।

हे निशंक! सुन लो चुनौती,
राह में न क्षणिक रुकना।
भयभीत विपदा हो मगर,
तुम कभी न तनिक झुकना।

सुन–
तेरी विजय निश्चित होगी,
वह अनगिन के हित होगी।
तूफ़ान आकर जाएगा,
गौरव विपुल तू पाएगा।

और विपदाएँ बहुत,
दासी बनकर आएँगी।
कष्ट पीड़ा दौड़कर,
उपहार तुझको लाएँगी।

♦♦

तेरे लिए मैंने निज को मिटाया

बहुत समझाया तुझे, बहुत समझाया,
पर क्या करूँ, तू समझ न पाया।

मालूम क्या तुझे,
मैंने किया क्या।
अमृत तुझे दे,
मैंने पिया क्या।
सब कुछ खोकर, मैंने क्या पाया,
बहुत समझाया तुझे, बहुत समझाया।
पर क्या करूँ, तू समझ न पाया।

तेरे लिए मैंने,
निज को मिटाया।
तेरे लिए निज को,
दर्दों में पाया।
फिर भी तो मैं, हर क्षण मुस्कराया,
बहुत समझाया तुझे, बहुत समझाया।
पर क्या करूँ, तू समझ न पाया।

उँगली पकड़कर,
चलना सिखाया।
अँधेरे में तुझको,
उजाला दिखाया।
फिर भी तू मुझको, समझ न पाया,
बहुत समझाया तुझे, बहुत समझाया।
पर क्या करूँ, तू समझ न पाया।

♦♦

बेचैन रहा

ये दौड़-भाग करता हर पल
कब-कब कैसे हम तक आया?
हमने खोया, पाकर खोया,
बदले में केवल दुख पाया।

बेचैन रहीं ये आँखें नित,
औ' सदा रहा चंचल ये मन।
आघातों से आच्छादित था,
मेरा सुकुमार सुकोमल तन।

करुणा ने गले लगाया था,
औ' गोद बिठाया पीड़ा ने।
सांत्वना विकल मन को दी थी,
आँसू की गीली लीला ने।

ये मत पूछो मित्रो हमसे,
कितने सदमे हमने खाए।
मत पूछो इस लघु जीवन में,
कब नहीं आँख आँसू आए।

♦♦

तुम्हारा नाम होगा

निर्बल है तू सबल बन, निर्बल सदा दबता रहा है।
है प्रकृति का ही नियम, वह अग्नि में तपता रहा है।

सभी ने तो की उपेक्षा,
उपहसित किया पग-पग जिसे।
जलता रहा यों ही तड़पता,
बचाया कब किसने उसे?
और जलने दो उसे, हर व्यक्ति यह कहता रहा है।
निर्बल है तू सबल बन, निर्बल सदा दबता रहा है।

ह्रास सबने ही किया,
वह भूमिका किसकी रही?
हृदय में चुभती रही,
वह शूलिका किसकी रही?
ह्रास की इस शूलिका से, अश्रु बहता ही रहा है।
निर्बल है तू सबल बन, निर्बल सदा दबता रहा है।

ईश ने तो तन दिया,
और हर गुण भी दिया है।
दोष थोपें क्यों किसी पर,
संघर्ष हमने कब किया है?
आज तक रोता रहा, दुखी हूँ कहता रहा है।
निर्बल है तू सबल बन, निर्बल सदा दबता रहा है।

यह सत्य है निर्बल नहीं,
सबल को सब जानते हैं।
शक्ति से परिपूर्ण यौवन,
मित्र या प्रिय मानते हैं।
समय की पहिचान भूला, हाथ वह मलता रहा है।
निर्बल है तू सबल बन, निर्बल सदा दबता रहा है।

तोड़ दो सारे ही बंधन,
मार्ग रोके जो खड़े हैं।
साथ उनको ले चलो,
निर्जीव जो भू पर पड़े हैं।
तब तुम्हारा नाम जग में, हीनता न लेश होगी।
और घृणा यह उपेक्षा, तनिक भी न शेष होगी।

♦♦

वर्षों की तेरी साधना

मैं,
जानता हूँ
वर्षों की तेरी साधना,
इसलिए
करता हूँ
मैं तेरी आराधना।

मैं जाने-अनजाने भी
सौगंध खाता हूँ,
तुम्हारी साधना में
मैं
स्वयं का संकल्प पाता हूँ।

तभी तो
यह निस्तब्धता
स्वयं ही आज तोड़नी है,
तुम्हारी
इस साधना में
धवल धारा जोड़नी है।

♦♦

यातना अकेली थी

यातना की कारा में,
दुख-दर्द की धारा में,
मैं कष्ट,
सब-कुछ ही सहता रहा,
चुपचाप दूर, बहुत दूर तक,
यों ही बहता रहा।

यातना अकेली थी,
बाँहें इसकी फैली थीं,
इसके मीठे दर्द को ले,
इसे साथी कहता रहा,
मैं संग-संग रहता रहा।

यातना की कारा में,
दुख-दर्द की धारा में,
शांत हो बहता रहा।
मुश्किलों की राह में
ज़िंदगी की आह में
हर क़दम दहता रहा।

♦♦

गिरते-उठते रोते-हँसते

अभी दूर
बहुत दूर है,
तेरा वह लक्ष्य
जिसको पाने के लिए
तूने
काँटों का सहारा लिया।
पग-पग पर
ठोकर खा-खाकर
जन-जन के हाथों से तूने
गरल का प्याला पिया।

चुभन सही
हर पल
चट्टानों से टकराया,
फिर भी
मार्ग न पाया।

तो अब सोच
काँटों से क्या घबराना है,
तू ही बता
अब क्या खोना क्या पाना है।
अब तो चाहे जो भी हो,
मिटने पर भी
आह न करना,
मौत निहारे
हर पल तुझको
उसकी भी
परवाह न करना।

♦♦

टूटना नहीं

टूटना नहीं
बिल्कुल भी
तुझे टूटना नहीं है।

टूटेगा तो
टूटेंगे तेरे अरमान
टूटेगी तेरी
हर सुबह और शाम।

ज़िंदगी
घने कोहरे में बदल जाएगी,
हर नज़र तेरी
घोर अँधेरा पाएगी।

ये दुनिया
तेरी हँसी उड़ाएगी,

हर बात
तुझ पर कहर ढाएगी।

इसलिए
हिमालय की तरह
तुझे अडिग रहना है,
तुझे आज आँधी और तूफ़ान के
हर आघात को सहना है।

♦♦

सोचने को दे गया

चारदुवारी के अंदर वे,
घिरे हुए हैं तम से।
प्रतिपल वे आघात झेलते,
हुए मूर्च्छित ग़म से।

आस लगाए हैं जीवन में
सुखद प्रकाश मिलेगा।
औ' मुरझाए मेरे पथ में
जीवन-पुष्प खिलेगा।

बात करेंगे, देख सकेंगे
तम को छोड़ें, दूर रहेंगे।
'जीवन में अँधियारा इनके'
फिर न कोई हमें कहेंगे।

डूबे थे इस चिंता में जब
तभी सुहाना दीपक आया।
आते ही पल-भर में इसने
जीवन का तम दूर भगाया।

इक-दूजे को देखा मन-भर
पर उनको विश्वास न आया।
बीत गया हो जैसे युग-सा
औ' दूजा युग पास न आया।

जल रहा प्रकाश देने
स्वयं के तल अँधियारा।
पर हमें ज्योतित करने
मिटाया तम है हमारा।

♦♦

इतना नेह न देना

सब-कुछ देना पर मुझको
तुम इतना नेह न देना।
खो जाऊँ मैं तुझमें इतना,
भूलूँ जग से दुख लेना।

♦♦

प्यारा जीवन

प्रिय काँटों से घिरा हुआ है,
दर्द-भरा यह प्यारा जीवन।
मिलता ज़ख़्म, भरा आँसू से,
करता सफ़र अकेला है मन।

♦♦

बाधा को तोड़े बढ़ा जा रहा हूँ

ठोकर मैं दर-दर की खा रहा हूँ,
पर बाधा को तोड़े बढ़े जा रहा हूँ।

जो इंसान सोया,
सुध-बुध को खोया।
बहुत था वो प्यारा,
पर बेहोश हारा।
उठा हूँ, जगाने उसे जा रहा हूँ,
ठोकर मैं दर-दर की खा रहा हूँ,
पर बाधा को तोड़े बढ़े जा रहा हूँ।

काला गगन था,
पर निर्भय वो मन था।
घिरा है अँधेरे,
अपने ही डेरे।
अब दीप आँधी लिए जा रहा हूँ,
ठोकर मैं दर-दर की खा रहा हूँ,
पर बाधा को तोड़े बढ़े जा रहा हूँ।

चिंता ने छोड़ा,
पीड़ा ने जोड़ा।
सवेरा जहाँ सर्द,
बिखरा वहीं दर्द।
बिखरा जो समेटने उसे जा रहा हूँ,
ठोकर मैं दर-दर की खा रहा हूँ,
पर बाधा को तोड़े बढ़े जा रहा हूँ।

♦♦

हिम के शिखर से बहता

हिम के शिखर से बहता,
यह आ रहा है कहता।

उसको क्यों भूल बैठे?
करते थे नाज जिस पर।
तू मौन देखता क्यों?
लपटें हैं आज इस पर।

ये जल रही धरा है,
हर महल तक भी ढहता।
हिम के शिखर से बहता,
यह आ रहा है कहता।

तुम भूलना न यह क्षण,
इससे विमुख न होना।
दुश्मन के हाथ देकर,
नहिं अपनी लाज खोना।

वह पूत है धरा का,
जो मृत्यु तक भी सहता।
हिम के शिखर से बहता,
यह आ रहा है कहता।

♦♦

जीवन मेरा तू ही सारा

बढ़ता रहा,
चढ़ता रहा।
आता रहा,
जाता रहा।
क्षण-क्षण में,
कण-कण में,
हर जगह ही तुझे पाया।

अभिन्न रहा,
न खिन्न रहा,
ढूँढकर भी मुझे लाया।
हर जगह ही तुझे पाया।
हर जगह,
हर रात में,
हर बात में,
हर चाह में,
हर आह में।

जिस दिशा में भी गया,
उस दिशा भी तुझे पाया।
आज तक पाता रहा,
आज भी तुझको ही पाया।

हर डगर पाना है तुझको,
छोड़ना चाहता है मुझको?
छोड़ दूँ तुझको मैं कैसे?
प्राण बन रह रहा जैसे।
जीवन तुझे कहकर पुकारा,
गोद ले तुझको दुलारा।
तूने दिया मुझको सहारा,
तभी तो तू 'दर्द' प्यारा।

♦♦

मीत तेरे गीत गाता

बढ़ रहा हूँ मैं उठाने, गिर रहा जो लड़खड़ाता,
जा रहा पथगामिनी पर, मीत तेरे गीत गाता।

अभी तक तो रात है,
अब घोर तम मिट जाएगा।
भटका अँधेरे में भटकता,
राह अपनी पाएगा।
तभी तो मैं हो सतत, प्रांत नेता को बुलाता,
जा रहा पथगामिनी पर, मीत तेरे गीत गाता।

सूर्य की प्रथम किरण आ,
श्वेत मुख खिल जाएगा।
दूर होता क्षितिज-सा,
लक्ष्य भी मिल जाएगा।
देख लूँगा एक दिन फिर, मैं तुझे मधु गीत गाता,
जा रहा पथगामिनी पर, मीत तेरे गीत गाता।

♦♦

संकल्प ले रहा हूँ

दहलकर दिल चुप रहा यों,
घूँट अंदर ही पिया है।

संस्कार था वह कौनसा,
नंगा किया जिसने तुझे है।
विधि का विधान है ये कैसा,
भूखा रखा इसने तुझे है।
तू स्वयं दुर्बल हुआ या,
दुर्बल तुझे किसी ने किया है।
दहलकर दिल चुप रहा यों,
घूँट अंदर ही पिया है।

प्रथम चरण में है अभी,
पर झुर्रियाँ चेहरे पे छाईं।
स्वच्छंद रहना था तुझे,
काली घटा क्यों घिर आईं।
सोचता, दयनीय दशा को,
जन्म ही क्यों कर लिया है।
दहलकर दिल चुप रहा यों,
घूँट अंदर ही पिया है।

दोष यह किसका बताऊँ।
आरोप तुझको दे रहा हूँ।
सुप्त पौरुष को जगाने,
मात्र संकल्प ले रहा हूँ।
झुकता रहा, पौरुष दबाया,
अन्याय तो तूने किया है।
दहलकर दिल चुप रहा यों,
घूँट अंदर ही पिया है।

♦♦

आह से उपजा गान

अब दर्द न देना है तुमको,
मैं दर्द स्वयं ही ले लूँगा।
ये मेरे सारे दर्द इन्हें
मैं ख़ुशी-ख़ुशी सब सह दूँगा।

मुझको तो ख़ुशियाँ ही देनी,
दुनिया की पीड़ा ले लूँगा।
बची हुई थोड़ी ख़ुशियाँ
भी ला दुनिया को दे दूँगा।

मेरे हर पग पीड़ा पहुँचाओ,
इस पर भी सबका हक़ होगा।
हर आह से उपजा गान,
कल जग का पथ-दर्शक होगा।

♦♦

फिर भी मधु-मुस्कान

क्षण-क्षण अगणित तीर हृदय में,
दुख के तुमने खाए।
और यही कारण है तुमने,
पग-पग काँटे पाए।

शिक्षा के घर जाकर भी तो,
तुमको चैन कहाँ है।
झंझावात भयानक जैसा
वातावरण वहाँ है।

घर तक भी तो चिंगारी ये,
यदा-कदा आती है।
सारे दिन, रजनी भर भी–
वह तुमको झुलसाती है।

तब भी मधु-मुस्कान बताओ,
तुमने क्या-क्या पाया?
कड़वा भी सुमधुर कर डाला,
लगता अमृतफल खाया।

♦♦

कोई मूल्य न होगा

काँटों में रहकर भी जो जन,
कोमलता ना तजते हैं।
पाँव तले हों या सिर शोभित,
सभी जगह वे सजते हैं।

मैंने देखा उन फूलों को,
जो न कभी मुरझाते हैं।
शूलों के संग रहने पर भी,
हर क्षण वे मुस्काते हैं।

सुन लो यदि वे मुरझा जाएँ,
विकसित यौवन के पल में।
कोई मूल्य न होगा उनका,
इस सारे जग नभ-थल में।

♦♦

ऐसा नहीं होने दूँगा

रूठा-रूठा कैसा मौसम,
रूखा-रूखा सब जीवन।
बाहर उजले-उजले हैं पर,
अंदर काले-काले मन।

हाय, बता यह कैसा जीवन,
बस स्वार्थों पर छाने को।
पहले खाते थे जीने को,
अब जीवन है खाने को।

नीरस-नीरस सारा जीवन,
केवल खाकर सोना है।
कट भी जाएगा यह जीवन,
यही तो इसका रोना है।

ललकारा है मैंने तुमको,
मैं ऐसा न होने दूँगा।
केवल पशु-सम जीवन जीकर,
तुम्हें नहीं रोने दूँगा।

बन मेरा 'अंकुर' 'ऋजुपर्ण',
हरियाली फैलाएगा।
और 'विधाता' घर-घर जाकर,
क़िस्मत सबकी चमकाएगा।
'तुम भी मेरे साथ चलो',
संदेश तुम्हें यह आएगा।

♦♦